International Journal of Advanced Educational Research
ISSN: 2455-6157; Impact Factor: RJIF 5.12
www.educationjournal.org
Volume 2; Issue 2; March 2017; Page No. 10-12

किसानों की दुर्दशा के कारण

आशा रानी

असिस्टैंट प्रोफ़ेसर (हिन्दी विभाग), वैश्य पी.जी. कॉलेज, भिवानी, हरियाणा, भारत।

प्रस्तावना

किसान का जीवन परोपकार की भावना से ओत–प्रोत होता है। वह दिन–रात परिश्रम करके अन्न उगाता है। वह अन्नदाता है। वह प्रकृति का पुजारी है। सबका पेट भरता है पर स्वयं भूखा भी सोना पड़ जाता है। भारतीय किसान के बारे में कहा जाता है कि भारतीय किसान का बेटा ऋण में जन्म लेता है, आजीवन ऋण–ग्रस्त रहता है और ऋण में ही चल बसता है।

सदियों से ऐसा चला आ रहा है। इनको सम्बल देने वाला कोई नहीं है। पहले मुसलमानों ने इन पर अमानवीय अत्याचार किये। रजवाड़ों ने भी नृशंसता की हद पार कर दी। अंग्रेज़ों के आने के बाद तो जबरदस्ती कर वसूली कर इनकी ज़मीनों को हड़पा जाने लगा, कहने का भाव है कि अंग्रेज़ों ने तो ज़ुल्म व सितम करने में कलम ही तोड़ दी। किसानों के लिए उम्मीद बनकर चौ. छोटूराम ने इनकी सुध ली। बनियों से इनकी ज़मीन बचा दी। आज़ादी के बाद ऐसी आस बंधी थी कि अब तो अपनी सरकार आई है, अतः इनकी अवस्था में सुधार आयेगा। लेकिन वही ''ढाक के तीन पात'' वाली कहावत चरितार्थ हुई है। इस समस्या के निवारण के लिए सार्थक कदम सरकार की तरफ़ से नहीं उठाये गये। इनकी हालत ज्यों की त्यों बनी हुई है।

''खेती किसानों का संकट आसमानी नहीं, सुलतानी है। यह कुदरत की मार नहीं सरकार की किसान–विरोधी नीतियों का नतीजा है। किसानों के संकट का बड़ा कारण खेती का लागत मूल्य बढ़ना और फसल की कीमत लागत से भी कम होना है। महंगी लागत को पूरा करने के लिए किसान क़र्ज़ के जाल में फंसते चले गये। किसानों की बढ़ती आत्महत्याओं के पीछे इस क़र्ज़ के जाल से निकल पाने को लेकर उनकी नाउम्मीदी है। जैसे–जैसे संकट बढ़ रहा है, किसान हत्या के आंकड़ें बड़ रहे हैं जबकि सरकार के किसान–विरोधी रवैये के चलते यह संकट हल होने की बजाए और गहराता जा रहा है। सभी सरकारें देशी–विदेशी पूंजी के हित में काम कर रही हैं और खेती को उनके मुनाफ़े के हिसाब से ढाल रही हैं।''[1]

अब इस समस्या के समाधान के लिए किसी भी सरकार से कोई भी उम्मीद नहीं की जा सकती है। इसके लिए किसानों को ख़ुद ही सही विचारों से युक्त होकर जुझारू एकता कायम करके जब तक हमारी माँगों की ओर ध्यान नहीं जाता है, तब तक सरकार से लड़ाई लड़नी होगी। संघर्ष के लिए सारे देश के किसान एक हो करके सबकी भलाई के लिए लड़ाई लड़ें।

''आत्मनिर्भरता ही आत्मनिर्णय के अधिकार को बचाने वाली ताक़त है। दुनिया की कूटनीति में अनाज इतना ज्यादा महत्त्व है कि यह किसी भी देश को दबाने में हथियार से अधिक कारगर है। इसीलिए धनी देश अनाज के मामले में अपना वर्चस्व बनाये रखने के लिए अपनी खेती किसानों को भारी सब्सिडी देकर उसे टिकाये रखते हैं। दूसरी ओर विश्व व्यापार संगठन के समझौते में ग़रीब देशों पर अपनी खेती पर सब्सिडी घटाने का दबाव बनाते हैं। पिछले दिनों नैरोबी में विश्व व्यापार संगठन में यही हुआ। आज हमारे देश में खेती लागतों पर तेजी से कटौती की जा रही है। यह साम्राज्यवादी दबाव के आगे हमारे शासकों के झुकने का नतीजा है।''[2]

अब विचार करने योग्य बात यह है कि जब दूसरे देश अपने किसानों की रक्षा के लिए भारी–भरकम सब्सिडी तथा अन्य सारी सुविधायें प्रदान करते हैं तो हमारी सरकारों को भी विचार करना चाहिए। खेती में मुनाफ़ा कम होता है। उद्योगों में अधिक मुनाफ़ा होता है। लेकिन सरकार पूंजीपतियों की सहायता करती है, किसानों की नहीं। पूंजीपतियों के तो हज़ारों करोड़ रुपये माफ़ कर देती है लेकिन किसानों के नहीं। इसके अतिरिक्त हमको उचित भाव दे दे तो भी किसान संभल सकते हैं लेकिन उसमें भी किसान की अनदेखी करती है। कृषि आयोग के अध्यक्ष स्वामीनाथन ने विश्व व्यापार संगठन के रवैये को देखकर कहा कि ''हमारा देश पहले ही गुप्त अकाल का शिकार है, जिसकी वजह से देश के अधिकांश बच्चों और वयस्कों को कम आहार मिलना और कुपोषण है। इसलिए सार्वजनिक नीति में ऐसा लचीलापन जरूरी है जो ग़रीब किसानों और उपभोक्ताओं की सहायता कर सके। दुर्भाग्यवश नैरोबी घोषणा भूख की चुनौती का सामना करने सम्बन्धित संयुक्त राष्ट्र के फ़ैसले के खिलाफ़ है।''[3]

किसान जिस वस्तु की खेती करता है यदि बम्पर फ़सल हो जाती है तो भी किसान मरता है। यदि नहीं होती है तो भी किसान मरता है। इसका कारण है अगर ज्यादा फ़सल होती है तो साहूकार द्वारा उसका भाव इतना कम हो जाता है कि लागत मूल्य भी नहीं मिलता है। न होने पर तो आप ही मर जाता है। यह सरकार की तथा पूंजीपतियों की सांठ–गांठ का नतीजा है। चुनाव से पहले बड़े–बड़े वायदे किये जाते हैं, लेकिन सरकार बनने के बाद सबको भुला दिया जाता है।

''एक सदी के दौरान वित्तीय सरमाये की बहुतायत वाली स्थिति पैदा हो गई है। जब वित्तीय सरमाये को ग्राहक नहीं मिलता तो उसका विश्वास रुक जाता है। इसे ही वित्तीय सरमाये का संकट कहा जाता है। इसकी बढ़ोतरी मानवता विरोधी रूप धारण करती है। आज किसान को वित्तीय सरमाये का 'कारिन्दा' बना दिया गया है। अतीत में किसान का रुतबा गौरवमय होता था। वह गर्व से कहता था मैं किसान हूं। मेरे पास ज़मीन है। मेरे पास अनाज है। पशु मेरे अपने हैं। दूध मेरा है। फल–सब्जियाँ मेरी अपनी हैं। मैं आज़ाद हूँ। यही किसान का स्वभाव था। क़र्ज़ ने उसकी सारी इज्जत का नाश कर दिया है।''[4]

कृषि क्षेत्र ऐसा क्षेत्र है कि इसके बिना समाज की बात तो छोड़ो लेकिन मानवीय अस्तित्व भी खतरे में होता है। भोजन के बिना गुज़ारा नहीं हो सकता है। सामाजिक और मानवीय जरूरतों के लिए भोजन खेतों में पैदा होता है। इस क्षेत्र के महत्त्व को नकारा नहीं जा सकता है। आबादी बढ़ेगी तो इसका ज्यादा महत्त्व बढ़ेगा। संकीर्ण राजनीति को छोड़ कर इसकी ओर ध्यान देने की आवश्यकता है। सरकार की इच्छा किसानों को बचाने की नहीं अपितु नष्ट करने की है। जबरदस्ती बीमा योजना किसानों को समाप्त करने की है। कैसी विडम्बना है कि जो फ़सल बोई नहीं

गई उसका बीमा कर दिया गया। ईख लगा रखा है। ऐसी घटना कुछ समय पहले सामने आई। फ़सल का बीमा बिना जानकारी कर दिया जाता है। इस स्कीम से किसानों को फ़ायदा नज़र नहीं आया बल्कि यह स्कीम केवल पूंजीपतियों के लिए है। ''कौन सी छिपी हुई ताक़त है जो मेहनतकशों की साझी दुश्मन है और इन नीतियों को चला रही है? इन सवालों का जवाब राजनैतिक चेतना के धुंधलेपन को हटाकर ढूँढा जा सकता है और नया इतिहास रचा जा सकता है। यह तभी सम्भव होगा जब हम मिलकर संघर्ष करें। अगर किसानों को तबाही से बचाना है तो हमें वर्गीय संघर्ष करना होगा यानी राजनीतिक संघर्ष की ओर बढ़ना होगा। वर्गीय संघर्ष सरमायेदारों के लिए है। उसके लिए सारे देश के किसान एक झण्डे के नीचे एकत्रित हो करके संघर्ष करने का बीड़ा उठायें। तभी सफलता मिल सकती है।''[5]

केन्द्र की ग़लत नीतियों के कारण किसान कंगाली के कगार पर पहुँचा है। 1960 के दशक में तो कुछ किसानों को लाभ हुआ लेकिन 1970 में सब कुछ उलटा पुलटा कर दिया तथा किसानों को क़र्ज़े के जाल में फंसा दिया गया। आज तक हम क़र्ज़ के जाल से मुक्त नहीं हो पाये। आर्थिक स्थिति ख़राब होती चली गई। किसानों और मज़दूरों की सब्सिडी को ख़त्म किया जा रहा है।

यह कहाँ का न्याय है कि प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से साहूकारों के क़र्ज़े माफ़ किये जाते हैं, अन्य सहूलियतें दी जा रही हैं। कॉरपोरेट घरानों को हर साल लगभग साढ़े पाँच लाख करोड़ के आर्थिक प्रोत्साहन दिये जा रहे हैं और किसानों को हर प्रकार का अनुसंधान बन्द किया जा रहा है। ''पंजाब कृषि विश्वविद्यालय जैसी विश्वप्रसिद्ध अनुसंधान संस्थाओं को फ़ण्ड देने से साफ मना किया जा रहा है और उनके कृषि फार्म बेचे जा रहे हैं, या बहुराष्ट्रीय कम्पनियों को दिये जा रहे हैं। किसानों की ज़मीन जबरदस्ती कॉरपोरेट घरानों को देने के मन्सूबे लगातार बनाये जा रहे हैं।''

''विश्व व्यापार संस्था के नैरोबी (केन्या) में हुए 15वें सम्मेलन में भारतीय कृषि क्षेत्र पर वज्र प्रहार किया है। वहाँ भारत और दूसरे विकासशील देशों की रीढ़ की हड्डी तोड़ने का मानवता विरोधी फैसला किया गया। इस फ़ैसले के बाद 2017 के बाद विश्व व्यापार संस्था से संबंधित सरकारें किसानी जिन्सों की खरीद व कृषि और अनाज पर मिल रही सारी सब्सिडियाँ ख़त्म हो जायेंगी।''[6]

इससे किसानों की लागत बढ़ जायेगी, फ़सल मन्दे में बिकेगी। किसान का अत्यधिक बुरा हाल हो जायेगा। यदि किसान सब्जी उगाता है तो उसको मज़दूरी भी प्राप्त नहीं होती है। आलू व टमाटर का क्या हाल हुआ है। ये शोचनीय दशा है। यदि गन्ना पैदा करता है तो उसको उसका लागत मूल्य नहीं मिलता है। गत वर्ष किसानों ने धान की फ़सल में अधिक घाटा खाया है। हमारे विचार में इस सदी का सबसे बड़ा घोटाला है। केरल में रबर पैदा करने वाले किसान मज़दूरी करने को विवश हैं। यही हाल अनानास पैदा करने वालों का है। यह समझ में नहीं आ रहा है कि किसान क्या पैदा करें क्या पैदा न करें? ऐसी असंवेदनशील सरकार है। किसानों–ग़रीबों के लिए द्वार बन्द रखती है। ऐसे हालात में हर 30 मिनट के बाद किसान आत्महत्या कर रहा है।

प्रेमचन्द के लेखों में किसानों की चिन्ता विस्तृत रूप में प्रकट की गई है। किसानों की जीवनदशा पर प्रकाश डालते हुए कहते हैं :–

''भारत के अस्सी फ़ीसदी आदमी खेती करते हैं। कई फ़ीसदी वह हैं जो अपनी जीविका के लिए किसानों के मोहताज हैं, जैसे बढ़ई, लोहार आदि। राष्ट्र के हाथ में जो विभूति है, वह इन्हीं किसानों और मज़दूरों की मेहनत का सदक़ा है। हमारे स्कूल और विद्यालय, हमारी पुलिस और फ़ौज, हमारी अदालतें और कचहरियाँ सब उन्हीं की कमाई पर चलती हैं, लेकिन वही जो राष्ट्र का अन्न और वस्त्रदाता हैं, भरपेट भोजन को तरसते हैं, जाड़े पाले में ठिठुरते हैं और मक्खियों की तरह मरते हैं।''[7]

प्रेमचन्द जी किसानों की दयनीय स्थिति को प्रकट करते हैं। दारुण व्यथा को देखकर अनायास अश्रुधारा बहने लगती है। कलेजा फटने लगता है। वे 'जबरदस्ती' शीर्षक में कहते हैं :–

''गल्ला पैदा हो रहा है, पर भाव इतना मन्दा है कि कोई दो वक़्त भोजन भी नहीं कर सकता। स्त्री के तन पर दो–चार गहने थे, वे साहूकार के पेट से बचकर सरकार की मालगुज़ारी के पेट में चले गये। नन्हें बच्चे, जो चीथड़ा ओढ़ कर जाड़ा काटते थे, वही अब उनका पिता पहन कर अपने तन की लाज ढक रहा है। माता के पास बस इतना वस्त्र है, जितने से वह घूँघट काढ़ सके।''[8]

इस सामन्तवाद ने किसानों की दशा और दिशा को ध्वस्त करके रख दिया है। पूंजीपति वर्ग हमेशा समूल खाने की चेष्टा कर रहा है। विकासशील देश अपने किसानों को भारी सब्सिडी देकर उनकी रक्षा करती है तथा दूसरे देशों की सभी प्रकार की आर्थिक सहायता व भण्डार, तथा खरीदने पर पाबन्दी लगाते हैं। विकासशील देशों को मिलकर इसका विरोध करना चाहिए। 'अंधा पूंजीवाद' शीर्षक में लिखते हैं – ''जिधर देखिये, उधर पूंजीपतियों की घुड़दौड़ मची हुई है। किसानों की खेती उजड़ जाये, उनकी बला से। कहावत उस मूर्ख की भांति जो उसी डाल को काट रहा था, जिस डाल पर बैठा था। यह समुदाय भी उस किसान की गर्दन काट रहा है, जिसका पसीना उसकी सेवा में पानी की तरह बह रहा है।''[9]

यदि सारे देश की यूनियन संगठित हो करके इस अन्याय–अत्याचार को दूर करने की सच्चे मन से इस शोषण को दूर करने के लिए एड़ी–चोटी का जोर लगा करके संयुक्त रूप से विरोध करें तो इसका निराकरण किया जा सकता है। जागो, होश करो, समय की पुकार है, अपने अधिकार प्राप्त करने के लिए खड़े हो जाओ। संसार की कोई ऐसी शक्ति नहीं जो तुम्हें रोक सके। प्रेमचन्द जी फिर सामन्तवाद पर चोट करते हुए कहते हैं ''यह आशा करना कि पूंजीपति किसानों की हीन दशा पर लाभ उठाना छोड़ देंगे, कुत्ते से चमड़े की रखवाली करने की आशा करना है। इस खुंख्वार जानवर से अपनी रक्षा करने के लिए हमें स्वयं सशस्त्र होना पड़ेगा।''[10]

बड़े–बड़े वायदे करने वाली केन्द्र सरकार व राज्य सरकारें सत्ता में आ जाती हैं। बनने के बाद सभी पार्टियां किसानों को अंगूठा दिखाती हैं। जनता को जागरूक हो कर सबक़ सिखाना चाहिए। गन्ने की खेती करने वाले किसान की हालत बदहाल तथा चीनी मिल वाले मालामाल। भरपूर फ़ायदा होता है फिर भी सरकार ब्याज रहित अनुदान के रूप में कई हज़ार करोड़ रुपये देती है।

''चीनी उद्योग महाप्रबन्धक तोमर के अनुसार

10 कुन्तल गन्ने मिलों पर होने वाला लाभ

उत्पाद	मात्रा	कीमत प्रति किलो	कुल रकम
चीनी	100 किलो	32.00 रुपये	3200.00 रुपये
शीरा	45 किलो	3.10 रुपये	139.50 रुपये
मैली	40 किलो	0.90 रुपये	36.00 रुपये
खोई	250 किलो	2.10 रुपये	525.00 रुपये

10 क्विंटल गन्ने से तैयार उत्पादों से कुल आया 3900 रुपये।''[11]

इतनी आमदनी होने के पश्चात् भी किसानों के गन्ने के भुगतान के लिए मिल मालिकों की सहायता करती है। यह कैसा खिलवाड़ है। जनता की गाढ़ी कमाई का पैसा लुटाया जा रहा है। किसानों को उचित भाव देने के लिए पैसे नहीं हैं। अंधेर नगरी चौपट राजा, टके सेर भाजी टके सेर खाजा वाली कहावत चरितार्थ हो रही है। पहले राजा प्रजापालक होते थे अब प्रजाभक्षक। देश के जल, जंगल, ज़मीन देशी–विदेशी धनकुबेरों को बेचने का शासक वर्ग फ़ैसला कर चुका है। ऐसी स्थिति में किसानों की दशा का आकलन स्वाभाविक रूप से किया जा सकता है।

''इस अन्धकार को चीरने के लिए हमें जाति–धर्म, भाषा, क्षेत्र, अगड़े–पिछड़े और ऊँच नीच की दीवारों को तोड़कर बाबा शाहमल के संघर्ष की मशाल को फिर से जलानी होगी। भोले–भाले किसानों को कैसे जागरूक करें, यह सर छोटूराम से सीखना होगा। किसान कैसे लड़ें, स्वामी सहजानन्द से जानना होगा। शहीदे आज़म भगतसिंह के विचारों की रोशनी में तमाम मेहनतकश जनता को संगठित हो कर निर्णायक संघर्ष की शुरुआत करनी होगी।''[12]

अब समय आ गया है इस जोर–सितम का मुकाबला करने के लिए उद्यत होना होगा। कोई भी अपनी वस्तु को घाटे में नहीं बेचता है, लेकिन हमारे मूल्य दूसरों से निर्धारित होते हैं। दूसरों के रहम पर जीना पड़ता है। सभी मेहनतकशों एवं किसानों को अपने अधिकार पाने के लिए किसी हद तक जाने के लिए तैयार रहना होगा। गूंगी–बहरी सरकार को ढोल बजा कर जगाना होगा। आइये, समय को व्यर्थ में मत गँवाओ। आखरी श्वास तक संघर्ष करके अपने हक़ प्राप्त करना होगा। तभी सफलता सम्भव है, अन्यथा नहीं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. किसान पुस्तिका – एक सितम्बर 2016, सम्पादकीय, पृ. 5–6
2. किसान भाग 7 फरवरी 2016 (खाद्यान्न आत्मनिर्भरता समाप्ति की ओर), पृ. 3–4
3. वही, पृ. 4
4. किसान पुस्तिका – एक सितम्बर 2016, पृ. 12
5. वही, पृ. 8
6. वही, पृ. 34
7. किसान अनियतकालीन बुलेटिन, मार्च 2015, पृ. 18, अनिल राय, अंक 6
8. वही
9. वही, पृ. 19
10. वही
11. किसान अनियतकालीन बुलेटिन, फरवरी 2016, अंक 7
12. वही, पृ. 7